International Journal of Advance and Applied Research
www.ijaar.co.in
ISSN – 2347-7075 Impact Factor – 7.328
Peer Reviewed Bi-Monthly
Vol.9 No.6 July – Aug 2022

संजीव कृत 'फाँस' उपन्यास में चित्रित किसान विमर्श

प्रीती यादव[1] दया शंकर यादव[2]
[1]एम.ए.,एम. एड.,सेट (हिंदी) पीपल्स कॉलेज, नांदेड
[2]सहयोगी एम.ए.,बी.एड्,सेट (हिन्दी), सायन्स कॉलेज नांदेड
***Corresponding Author-* प्रीती यादव**
Email- priyamprashashti@gmail.com
DOI- 10.5281/zenodo.7070825

सारांश

समकालीन हिंदी साहित्य परंपरा में विमर्शवादी साहित्य का दौर शुरु हुआ है। जो सदियों से उपेक्षित सामाजिक वर्गों की वेदना और शोषण को परिलक्षित करता है। ऐसे उपेक्षित वंचितों में समाज का दलित, स्त्री, आदिवासी, मजदूर, दिव्यांग, किन्नर और किसान वर्ग का समावेश होता है। इसी दृष्टि से सदियों से उपेक्षित-वंचित किसान की व्यथा-वेदना को भी स्वर हिंदी उपन्यासों में आज मिल रहा है। आज हिंदी तथा भारतीय भाषाओं में एक प्रमुख विमर्श के रूप में किसान विमर्श की चर्चा बडी ही गंभीरता से हो रही है। विमर्श शब्द का अर्थ-विचार, विवेचना, आलोचना, परीक्षा, जांच अथवा परामर्श होता है।1 किसान विमर्श या कृषक विमर्श का शाब्दिक अर्थ होता है – किसान से संबंधित विचार या विवेचन, चर्चा। किसान जीवन से संबंधित पहलुओं की चर्चा, विचार – विनिमय जिसमें की जाती हैं उसे किसान विमर्श कहा जाता है। किसानों के जीवन से संबंधित विभिन्न पहलुओं पर गहन तथा बहुआयामी चर्चा किसान विमर्श में की जाती है। किसानों के जीवन को लेकर, साहित्य सम्राट प्रेमचंदजी ने गोदान उपन्यास में किसान विमर्श की परंपरा यथार्थ रूप में शुरु की थी और वही परंपरा इक्कीसवीं सदी में संजीव ने अपने फाँस उपन्यास में यथार्थ और अध्ययनशीलता के साथ की हैं। किसानों का आर्थिक जीवन दयनीय क्यों हैं? क्यों किसान आत्महत्याएँ कर रहा हैं? ऐसे कई प्रश्नों के उत्तर संजीव कृत फाँस उपन्यास में मिलते हैं। यही प्रस्तुत लेख का उद्देश्य है, जो किसान विमर्श को परिलक्षित करता हैं।

प्रस्तावना

संजीव एक साहित्यकार के रूप में प्रेमचंद के वंशज ही नजर आते है, क्योंकि उन्होंने अपने धार, जंगल यहाँ शुरू होता है, सर्कस, किसन गढ के अहेरी, सावधान, नीचे आग है, पाँवतले की दूब, सूत्रधार, आकाश चंपा और फाँस आदि उपन्यासों में उपेक्षित-वंचित सामाजिक वर्गों का यथार्थ चित्रण करके पाठकों को झकझोर दिया है। इसी परंपरा में फाँस उपन्यास भी आता है। फाँस उपन्यास वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली द्वारा सन 2015 में प्रकाशित हुआ है। जो किसान विमर्श को अभिव्यक्त करता है। फाँस की कहानी भारत जैसे कृषि प्रधान देश की सच्ची कहानी है। भारत में सबसे विकसित कहे जानेवाला महाराष्ट्र के विदर्भ क्षेत्र के कपास और सोयाबीन उत्पादक किसानों की दर्द भरी कहानी है, जो गरीबी और कर्ज से तंग आकर आत्महत्या करते हैं। बच्चों की पढाई, परवरिश, बेटियों की शादी और पारिवारिक गरीबी तथा किसानी से उत्पादन कम तो कभी कुछ भी नहीं। ऐसी आर्थिक घमासानों की स्थिति से छुटकारा पाने के लिए किसान मौत को गले लगाकर आत्महत्या कर रहे हैं। ऐसी दर्दनाक और मन को सून्न करनेवाली स्थिति से उपन्यास का प्रमुख परिवार पिता शिवशंकर, माँ

शकुंतला, बेटी कलावती और सरस्वती पर गुजरता है। शिवशंकर भारतीय किसानों का प्रतिनिधित्व करनेवाला किसान है। जो भारतीय आर्थिक नीति, साहूकार और बैंकों की नीति से प्रताड़ित शोषित किसान हैं।

संजीव ने किसानों की आत्महत्या के कारणों को बताते हुए हमारा ध्यान बुनियादी तथ्यों पर केन्द्रित किया है। क्योंकि किसानों की किसानी प्राकृतिक मौसम पर निर्भर होती है। आजकल बे मौसम बरसात होती है, या तो सूखा पड़ता है, इसलिए किसानों को दो बार बूआई करनी पडती हैं।

पहले बूआई के लिए ही उन्हें कर्ज लेकर किसानी करनी पडती है। और दूबारा बूआई के लिए भी कर्ज लेने की नौबत आती है। इन आर्थिक त्रासदी में ही किसानों का जीवन प्रताडित होता रहता है। मानों ऐसा जीवन जीना उसकी नियती ही बन चुकी हो। शकुन इस परिस्थिति से गुजरते हुए कहती है- "इस देश का किसान कर्ज में ही मर जाता है।"2 इसके साथ ही कर्ज में डूबे किसानों की फसल भी कई बार प्राकृतिक मौसम के खराब होने से तबाह होती है और ऐसी परिस्थिति में बैंक नीति भी किसानों को दूबारा कर्ज देने के लिए मना करती हैं। ऐसी स्थिति में बैंक मॅनेजर शिबु जैसे किसानों को कहता हैं-"बीस हजार हेक्टर की फसल तबाह हो गयी। बैंक किसानों को पहले ही ऋण दे चुका है, दोबारा देना संभव नहीं।"3 ऐसी भीषण परिस्थितियों से गुजरते किसानों के सामने बेटियों की शादी, बेटों की पढाई और पारिवारिक आजिविका के कई प्रश्न खडे होते हैं। परिणामी किसानों को बैंको के बाद ना चाहते हुए भी साहूकारों से कर्ज लेने की नौबत आती हैं। उपन्यास का नारायण नामक साहूकार किसानों की इसी मजबूरी का फायदा उठाकर मुनाफा कमाना चाहता हैं। और किसानों को कर्ज के बदले उनकी जमीनों के दस्तावेज गिरवी रखकर पैसे देते रहता हैं। जरूरत मंद किसानों को वे हमेशा कहता रहता है-" फसल के लिए पैसा चाहिए या मुलगी की शादी के लिए, घर के मरम्मती के लिए या किसी और कार्य के लिए – हम जानकर क्या करेगा – जमीन का कागज जमा करों, टीप दो और ले जाओं। हाँ, रेट टेन परसेंट हैं।"4 हालात के मारे किसान मजबूरी के दस प्रतिशतों से कर्ज लेकर अपनी जरूरतों को पूरा करते हैं।

देसी महाजनों, साहूकारों से कर्ज लेने के बावजूद किसान की किसानी उन्हें धोखा देती हैं। कर्ज चूका नहीं सके तो किसान पेड से लटककर फाँसी लगा लेते हैं। फाँसी लगाकर आत्महत्या करने के बाद सिर्फ चर्चा ही होती हैं, जैसे कौन था? क्यों फाँसी लगायी? कर्ज लिया था क्या? ऐसे कई सवालों की केवल चर्चा ही होती है। "दो-दो बार फसल मारी गयी, कर्ज लिया, न दे पाया, मार लिया खुद को, सो वहीं लोग लाश को चीर-फाडकर अन्त्योंष्टि मनाकर भूलने लगेंगे। इसी दृष्टि से उपन्यास का नायक शिबू और शकुंतला भी साहूकारी और बैंक के कर्जे से परेशान होते हैं। साथ ही घर में दो-दो शादी की बिटियाँ होने से और भी परेशान रहने लगते हैं।

इसलिए कर्ज के बोझपर अपनी बेटियों के और घरवाली के गहने तक शिबू गिरवी रखता हैं, ताकि खेत में कपास और सोयाबीन की अच्छी फसल होगी तो सभी का कर्ज भूगतान करें। ऐसी चर्चा रोजाना पति-पत्नी करते रहते हैं। लेकिन "इस बार जितना सोयाबीन, जितना कापूस हुआ, सब को बेचने पर मिले ग्यारह हजार नौ सौ। सात हजार पिछले साल का, कुल अठारह हजार दो सौ।"6 बैंक जाकर पता चलता है कि कर्ज का ब्याज अधिक होने के कारण शकून को अपने गहने तक गिरवी रखने पडते हैं। खेत में सोयाबीन की फसल आती हैं तो सरकार द्वारा मूल्य घोषित नहीं होता। परिणामी सरकारी नीति का फायदा बाजार की बनिये किसानों का फायदा उठाने के लिए कम कीमतों में सोयाबीन खरीद लेते हैं। किसानों का बनियें द्वारा आर्थिक शोषित होकर वे गरीबी की जाल में फँसे रहते हैं।

संजीव बाजार के किसानों के संवादों से अभिव्यक्त करते हैं- "देख नहीं रहे हो बाजार के बनिये टहलने लगे हैं। भाव गिराकर 3400 से 3200 रू प्रति क्विंटल पर ले आये। इस कींमत पर देना है तो इन्हें तौलवाकर घर जाओ, वरना मक्खी मारो।"

"मैं तो यार घर से ओढने के लिए भी नहीं लाया कुछ। रात कुकडाता रहा ठंड से। बारह के बाद ठंड सही नहीं जाती। धोती खोलकर ओढी मगर कहाँ? ऐसा ही रहा तो मैं तो बनियों को बेचकर चला जाऊँगा। जब देश का फैसला देसी-विदेसी बनियों को ही करना हैं तो सरकार क्यों हमें चुतिया बना रही है।"7 और अंत में किसानों को अपना अनाज कम किमतों पर ही बेचने की नौबत आती है। यही किसान की किसानी और बाजारवाद की सच्चाई है जो संजीव ने यथार्थ रूप में रेखांकित की है। इसी दयनीय परिस्थिति से जुझते-जुझते किसान अंत में आत्महत्या को ही स्वीकृति देकर अपना प्रताडित जीवन समाप्त करते हैं। शिबू भी इसी कारण गले में फाँस लगाकर, मौत को गले लगाकर अपनी दो बेटियों और पत्नी को गमों के अंधेरों में छोडकर चला जाता हैं। आत्महत्या के बावजूद भी किसानों की उपेक्षा रूकती नहीं है। सरकार द्वारा आत्महत्या ग्रस्त परिवारों को मुआवजा की रक्कम के लिए कई समस्याओं का सामना करना पडता हैं। आत्महत्या के प्रमाणों को लेकर सरकारों को नीति का सामना करना पडता है।

क्योंकि "सरकारने मान लिया है कि शेतकरी तो मरेंगे ही मरेंगे, इन्हें पात्र से अपात्र बनाने के लिए कोई प्रमाण देनेवाला तो हो। पोस्टमार्टम में क्या मिलेगा-जहर! न लाचारी निकलेगी, न टेंशन, न कर्ज!"8 सरकार के मंत्रीगण किसान आत्महत्या पर केवल खोखली बाते करते हैं, उन्हें किसान और उनके परिवार के दुख दर्द का कोई लेना-देना नहीं होता है। "कापूस छोडकर ऊस की खेती करों, ताकि उनकी चीनी की मीले चलती रहें। दूसरे है दिल्ली के कृषिमंत्री, बडे दुखी रहते हैं किसानों के लिए जब ज्यादा दुखी होते है, तो क्रिकेट के धंधों में मन लगाते हैं।"9 ऐसे सरकारी मंत्री भी किसानों की भावनाओं के साथ खेलने लगते हैं। और दुख की बात यह है कि ऐसी ही मंत्रीगण सरकार की कृषक नीति बनाते हैं, जो किसान की पीडा का कारण बनती हैं।

किसान के जीवन की विडंबना यह है कि जीस जमीन का वह मालिक होते हुए भी कर्ज के भुगतान के कारण वही किसान मालिक अपनी ही जमीन में मजदूर बनकर मजदूरी करने की नौबत आती हैं। शिबू की पत्नी शकून पति की मौत के बाद आजिविका चलाने के लिए वह अपने ही खेत में कपास चूनने के लिए मजदूर बनती है। संजीव के शब्दों में – "अपने ही खेत में मजदूर बन कर कपास चुन रही है शकुंतला असिंचित भूमि के खेत सूखकर ठन-ठन बनने लगे हैं। दरारे दिखने लगी है। कपास तैयार है पर मजूर मिले तब न। असिंचित भूमि के कपास हल्के होते हैं। देरी का मतलब है घाटे का बढता जाना। 8 रूपये प्रति किलो यानी 120 रूपये पड रही है मजदूरी सिंचित कापूस की और 6 रूपये प्रतिकिलो का भाव असिंचित का। शकुंतला जैसी मजूर ने एक दिन में तीन-तीन मन चुन लेती हैं। यानी 360 रूपये की कमाई जब तक मौत है, कमालो अखरता हैं किसानों को। मालिक से तो मजूर भले।"10

संजीव ने किसान की ऐसी बीमारू हालातों के कारण ही आज क्यों किसान किसानी छोडना चाहता है इसके भी कई तथ्य प्रस्तुत किए हैं। आज की किसानी कोई सभ्यता का व्यवसाय नहीं रहा हैं। किसान अपनी बेटी की शादी किसान परिवार में करने के बजाय वह मजदूर परिवार में करना चाहता हैं। इसलिए किसान को विवाह के लिए लडकी नहीं मिलती, लेकिन खेती बेचकर सरकारी चपरासी की नौकरी मिलने पर हर कोई सरकारी चपरासी को लडकी देना चाहता है, क्योंकि किसान का मतलब है मौत। इतने बत्तर हालात आज के किसानों के है। संजीव के शब्दों-"बल्कि मरना एक मुक्ति है और जीना

एक बंधन। आये दिन तो आत्महत्या की खबरें सुनते रहते हैं। जिधर देखों उधर, कोई पेड की डाल पर, लटका पडा हैं, कोई कुएँ में गिरा पडा है तो कोई कीटकनाशक खाकर मुँह से झाग फेंक रहा है।"11 इसलिए किसान आज किसानी छोडकर मजदूरी करना चाहता है या कोई जमीन बेचकर सरकारी चपरासी की नौकरी करके किसानी जीवन से मुक्त हो रहा हैं। क्योंकि किसान होकर किसानी करना मानों गले में फाँस लगाकर मौत को गले लगाना हैं।

सारांशत: कहा जाये तो संजीव कृत फाँस उपन्यास में किस प्रकार अन्नदाता किसान, सरकारी नीति, बैंक, साहूकारी कर्ज से परेशान होने के बावजूद भी प्राकृतिक आपदाओं से भी वह प्रताडित जीवन जी रहा हैं। ऐसे समय में पारिवारिक जिम्मेदारियों को किस प्रकार से निभाया जाय और कर्ज का भूगतान कैसे करे? ऐसे कई प्रश्नों से जुझकर वह अंत में आत्महत्या का फाँस गले में लगाकर इस प्रताडित, उपेक्षित जीवन से छुटकारा पाते हैं। फाँस उपन्यास का शिबू किसान भारतीय किसानों का प्रतिनिधित्व करता नजर आता हैं। वह केवल महाराष्ट्र का किसान नहीं है, बल्कि पूरे भारत वर्ष का किसान हैं। इसलिए संजीव ने फाँस के माध्यम से किसान विमर्श की अभिव्यक्त कई वास्तविक तथ्यों के आधार पर की हैं। इसके साथ ही सरकारी नीति के खोखले वादे किसानों की किसानी बचा नहीं सकते, बल्कि किसानों के फसल को सही दाम विदेशी नीति की तहत कई प्रकार के अनुदान देने के सुझाव भी संजीव देते हैं।

अत: फाँस आज के इक्कीसवी सदी के किसानों की दर्दनाक और त्रासदी से भरी हुई कहानी है, जो भारतीय कृषक नीति का पर्दा फाश करती हैं।

संदर्भ सूची :

1. Chief Editor, Dr. Dhanraj, T. Dhangar, Research Journey, Feb. 2019 Peg. No. 34
2. संजीव, फाँस, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, सन् 2019, पृ. 15
3. वही, पृ. 97
4. वही, पृ. 98
5. वही, पृ. 14
6. वही, पृ. 62
7. वही, पृ. 139
8. वही, पृ. 54
9. वही, पृ. 154
10. वही, पृ. 127-128
11. वही, पृ. 43